चतुर्थ अध्याय

श्री मालवीय जी समाज सेवक, हिन्दुत्व के रक्षक, महान अधिवक्ता के रूप में

अ) श्री मालवीय जी– एक समाज सेवक

ब) श्री मालवीय जी– हिन्दुत्व के रक्षक

स) श्री मालवीय जी– एक महान अधिवक्ता

Estelar

चतुर्थ अध्याय

श्री मालवीय जी समाज सेवक, हिन्दुत्व के रक्षक, महान अधिवक्ता के रूप में

अ) श्री मालवीय जी- एक समाज सेवकः-

श्री मदन मोहन मालवीय बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उन्होनें तत्कालीन समाज का बहुत गहनता से अध्ययन किया तथा विद्यमान सामाजिक कुप्रथाओं को हटाने का भरसक प्रयास किया। मालवीय जी का लालन पालन ही ऐसे परिवार में हुआ था कि उनमें तत्कालीन समाज की बुराइयों को स्वतः ही समझने की क्षमता विकसित हो गयी।

मालवीय जी ने तत्कालीन समाज में प्रचलित समस्त बुराइयों व कुरीतियो/कुप्रथाओं के विरूद्ध आवाज उठायी व उसे दूर करने का प्रयास किया। उस समय भारत में बाल–विवाह, वेश्यावृत्ति, दहेज प्रथा, जात–पात जैसी कुप्रथाएँ थी, इसके अतिरिक्त विधवाओं की शोचनीय

Estelar

हालत थी, कन्याओं को जन्म लेते ही हत्या कर दी जाती थी। अभ्युदय के एक अंक में मालवीय जी ने लिखा है– 'हमारे जातीय जीवन में सैकड़ों वर्ष से अंधविश्वास–रूपी कुसंस्कार इकट्ठे हो गये हैं, जिनके कारण हमारी जाति प्राण–विहीन समझी जाती है।[1] इन कठिन परिस्थितिओं से भारत को निकालने की जिम्मेदारी आधुनिक शिक्षित वर्ग ने अपने ऊपर ली।[2] इस शिक्षित वर्ग में मालवीय जी एक महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। अभ्युदय के अंक में उन्होंने आगे लिखा है – अतएव इन कुसंस्कारों को हटाने के लिए ब्रह्मचर्य और सुचरित्र–रूपी पैने हथियारों का उपयोग करना ही जातीय जीवन के उत्थान का एकमात्र मार्ग है। परन्तु हमारा सुचरित्र होना, ब्रह्मचारी बनना अथवा अन्धविश्वास का परित्याग करना तभी हो सकता है, जब हम अपने स्त्री–वर्ग को सुधार कर उसे अपने अनुकूल बना लें। जब तक हम इस वर्ग को अपने साथ लेकर नहीं चलते, तब तक हम कभी जातीय जीवन की लहलहाती हुई लता को देखकर आनंदित नहीं हो सकते, क्योंकि मानव समाज का कल्याण अथवा अकल्याण, उच्च अथवा नीच होना स्त्रियों के ही हाथ में है।[3]

उन्होनें वैदिक काल से ब्रिटिश काल तक के समाज का तुलनात्मक अध्ययन किया, उन्होनें देखा कि वैदिक काल में महिलाओं को समाज में सम्मानजनक स्थिति प्राप्त थी। तत्पश्चात् सल्तनत काल में उनकी स्थिति में ह्रास हुआ। मुगल काल में असुरक्षा की भावना विकसित हुयी और दिन प्रतिदिन महिलाओं की स्थिति दयनीय होती चली गयी।

बाल विवाह के सम्बन्ध में उनका विचार था कि लड़कियों का विवाह बहुत ही कम उम्र में कर दिया जाता था तथा इस प्रकार लड़कियों से विद्याध्यन का अधिकार छीन लिया गया। मालवीय जी ने बालिका शिक्षा का समर्थन किया। मालवीय जी ने बाल विवाह की रोकथाम के लिए एक

Estelar

प्रस्ताव विधान सभा में रखा जिसमें प्रस्तावित था कि जो व्यक्ति ऐसे विवाह समारोह में भाग लेगा जिसमें लड़की की आयु तथा लड़के की आयु 16 वर्ष से कम होगी उसको रू0 50 से रू0 5000 तक का दण्ड मिलेगा।[4] उन्होनें इस विषय पर बोलते हुए कहा था कि मरी इच्छा है कि इस विषय पर अतिशीघ्र कानून बनना चाहिए।[5] उन्होनें तर्क दिया था कि कम उम्र में लड़कियां न तो शारीरिक रूप से और न ही मानसिक रूप से परिपक्व हो पाती हैं। उन्होनें कहा कि यदि लड़कियों का विवाह इतनी कम उम्र में कर दिया जायेगा तो वे स्वस्थ नहीं रह सकेगीं और पूरा राष्ट्र पतन की ओर अग्रसर हो जायेगा। उस समय माता पिता लड़कियॉ का जल्दी विवाह करके मुक्त होना पसन्द करते थे।[6] वे इस बात के प्रबल विरोधी थे।

वेश्यावृत्ति की बुराई को समाज से हटाने का प्रयास मालवीय जी ने समय–समय पर अपने लेख व भाषण द्वारा किया। प्राचीन काल से यह बुराई किसी न किसी रूप में समाज में व्याप्त थी और इसे रोकने के लिए अनेक कानून भी बनाए गए किन्तु अपेक्षित परिणाम नहीं मिले। दादा भाई पटेल के भाषण को समर्थन देने के लिए 18 सितम्बर 1912 को मालवीय जी ने कहा "उनके विचारों से मैं सहमत हूँ। वैश्यावृत्ति पर सरकार द्वारा लगाये गये बिल का मैं समर्थन करता हूँ। छोटी लड़कियों का व्यापार रूकना चाहिए, उनसे सम्बन्धित वेश्यावृत्ति रोकी जाये।"[7]

भारत में व्याप्त दहेज प्रथा की बुराई को दूर करने के लिए प्रयास किया। प्राचीन भारत में माता–पिता अपनी पुत्री को विवाह के अवसर पर स्वेच्छा से जरूरत भर का सामान दे कर विदा करते थे किन्तु समय के साथ–साथ यह स्वेच्छा से न होकर अनिवार्य हो गया तथा दहेज की मात्रा भी बढ़ने लगी। इसके अभाव में गृहस्थ जीवन कलेशमय हो जाता था तथा वैवाहिक सम्बन्ध टूट जाते थे। मालवीय जी ने इस को

Estelar

निम्न प्रकार से व्यक्त किया, "विवाह में कम से कम व्यय किया जाना चाहिए। तिलक में एक मुद्रा और एक नारियल तथा कुछ वस्त्र इसे अधिक कुछ नहीं दिया जाना चाहिए। यदि वर का पिता तिलक के समय या विवाह के अवसर पर कोई रकम की माँग करता है ता यह शास्त्र सम्मत नहीं है। दहेज प्रथा धर्म के विरूद्ध है। शास्त्र में विक्रय, अपव्यय की घोर निन्दा की गयी है और अपव्यय शब्द के अर्थ में कन्या और वर दोनों आ जाते हैं, जो व्यक्ति इस व्यवस्था को अपनायेंगे, वे पाप व अपयश के भागीदार होंगे।"[8]

मालवीय जी ने छुआछूत तथा अस्पृश्यता को समाज से दूर करने का प्रयास किया। मालवीय जी का मानना था कि यदि अछूतों को हिन्दू समाज से अलग रखा गया तो ब्रिटिश शासन के विरूद्ध हमारा संघर्ष कभी समाप्त नहीं होगा और भारत की स्वतन्त्रता अनिश्चित रहेगी। यदि 32 करोड़ में से 6 कराड़ भाई एक तरफ खड़े रहे तो हमारी ताकत की रस्सी कमजोर रहेगी।[9] मालवीय जी अस्पृश्ता को समाज की प्रगति में बाधक मानते थे और इसको समाप्त करने के लिए उन्होंने कहा था "प्रत्येक मनुष्य को पूर्ण अधिकार है कि वह अपने को किसी भी सामाजिक नाम से पुकारें।"[10] महाभारत के वनपर्व का उल्लेख करते हुए उन्होंने व्यक्त किया है–

वर्णोत्कर्षमवाप्नोति नरः पुण्येन कर्मणा।

तथापकर्ष पापेन इति शास्त्रनिदर्शनम्।।

अर्थात् मनुष्य पुण्य–कर्मों के करने से वर्ण में ऊपर उठ जाता है और नीच कर्म करने से नीचे गिर जाता है, यह शास्त्र कहता है। तथा

शूद्रोऽपि शीलसंपन्नो गुणवान ब्राह्मणो भवेत।

ब्रह्मणोऽपि क्रियाहीनः शूद्रात् प्रत्यवरो भवेत्।।

Estelar

अर्थात् शूद्र भी सुशील अर्थात् पवित्र चरित्रयुक्त और गुणवान् हो तो वह ब्राह्मण हो जाता है और ब्राह्मण भी अपना धर्म छोड़ दे या उससे रहित हो तो वह शूद्र से भी नीचे गिर जाता है।[11] इसी के साथ मालवीय जी ने कहा कि यदि वे गन्दे रहते हैं तो उन्हें सफाई सिखायें। उनके बच्चों का स्कूल में दाखिला कराओ।[12]

मालवीय जी ने अछूतों की साफ रहने की आदत पर जोर देते हुए कहा कि वे भी हमारी तरह साफ रहते हैं। 1929 में लाहौर के पंजाब हिन्दू सम्मेलन में उन्होनें कहा कि "मुझे एक भी भंगी ऐसा नहीं मिला जो स्नान किये बिना भोजन करता हो। वे प्रातः उठकर राम–राम जपते हैं। व्रत रखते हैं और गंगा स्नान करते हैं।"[13] मालवीय जी ने कहा कि यह ठीक नहीं है कि आप उनको मौहल्ले के कुओं में पानी न भरने दें, यदि उनके कपड़ें, उनके हाथ, उनका घड़ा साफ नहीं है तो उनसे साफ करने के लिए कहो मगर पानी भरने दें। अन्यथा एक विभीषण के कारण लंका समाप्त हो गयी यहाँय करोड़ो विभीषण बन सकते हैं, उस समय भारत का क्या होगा।[14]

मालवीय जी छुआछूत के आधार पर मन्दिर व अन्य स्थलों पर प्रवेश प्रतिबन्धित करने के विरोधी थे। 1927 में हिन्दू महासभा के एक अधिवेशन में उन्होंने कहा था, "कोई मनुष्य अछूत है, केवल इस कारण उसे मन्दिर में प्रवेश और देव–दर्शन से वंचित नहीं किया जा सकता। उसकी आत्मा पवित्र है तो भगवान भी उसकी प्रार्थना सुनता है जो व्यक्ति नैतिक रूप से पवित्र है, वह व्यक्ति ईश्वर को उस व्यक्ति से अधिक प्यारा है जो केवल शरीर से पवित्र है।"[15] जब महात्मा गाँधी ने अछूतोद्धार का आन्दोलन उठाया तो मालवीय जी ने भी उसमें सहयोग दिया और शूद्रों को

Estelar

मंत्र–दीक्षा देने का निश्चय किया, पर वे किसी धार्मिक कार्य में स्वेच्छाचारिता के व्यवहार को बुरा मानते थे।[16] इसके पश्चात उन्होंने स्वंय काशी में गंगा तट पर बैठकर चारों वर्णों के लोगों–यहाँ तक कि चाण्डालों को भी 'ऊँ नमः शिवायः' 'ऊँ नमो नारायण', 'ऊँ नमो भगवते वासुदेवाय' आदि मंत्रो की दीक्षा देनी आरंभ कर दी। इसके कुछ वर्ष बाद जब वे नासिक गये तो वहाँ गोदावरी के तट पर बहुत से हरिजनों को दीक्षा दी। प्रयाग और कलकत्ता में भी कई बार ऐसे ही दीक्षा–समारोह हुए।[17]

मालवीय जी ने लिखा है कि अछूत सनातनधर्म समाज के अंग है। इनकी उन्नति करना, इनको सामान्य और धार्मिक शिक्षा देना और समाज के दूसरे अंगों के समान इनकी रक्षा करना और इनको आगे बढ़ाना हमारा अवश्य कर्त्तव्य है।[18] अस्पृश्यता का समाधान करने के सम्बन्ध में कहा कि जो व्यक्ति एक बार मन्दिर के पवित्र वातावरण में प्रवेश करता है वह तुरन्त पवित्र हो जाता है–चाहे वह कोई भी जाति का हो। कोई व्यक्ति कितना भी नीच क्यों न हो, उसके स्पर्श से मन्दिर या मूर्ति अपवित्र नहीं हो जाती, जिस प्रकार गंगा में अशुंद्ध पानी आकर मिल जाता है फिर भी गंगा शुद्ध रहती है।

मालवीय जी किसानों के अधिकारों और हितों की समुचित रक्षा पर जोर देते थें। कृषक वर्ग, जो कि समाज के अभिन्न वर्ग था, के आर्थिक सुधारों के भी पक्षधर थे। उनकी यह उत्कट इच्छा थी कि किसानों में आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता और मानवगौरव की भावना पुष्ट की जाये। सरकारी अफसरों और कर्मचारियों तथा जमींदारों और उनके कारिंदों की ओर मुंह उठाकर देखने की उनमें शक्ति पैदा की जाय। उन्हें बताया जाय कि उन्हें नागरिकता के वे सब अधिकार प्राप्त हैं जो उनसे अधिक सम्पन्न भारतीय नागरिकों को प्राप्त हैं।[19] मालवीय जी का कहना था कि भारत में

Estelar

अंग्रेजों का आधिपत्य प्रतिष्ठित होने से पहले हमारा देश कृषि–प्रधान और व्यवसाय प्रधान दोनों था तथा अंग्रेज शासकों की आयात, निर्यात तथा अन्य दोषपूर्ण वित्त–नीतियों एवं आर्थिक गतिविधि के कारण ही भारत एकमात्र कृषि–प्रधान देश बन गया। व्यावसायिक क्षति के कारण व्यवसायशील जातियां बरबाद हो गयी, खेती पर देश की निर्भरता बढ़ती चली गयी, तथा अकाल की परिस्थिति का सामना करने की हमारी सामर्थ्य कम होती गयी।[20] मालवीय जी चाहते थे कि हमारी आर्थिक व्यवस्था सामाजिक न्याय पर आश्रित हो तथा उसका लक्ष्य जनकल्याण और राष्ट्रहित की वृद्धि हो, इसके साथ ही वह न्यासिता के भाव से अनुप्रमाणित हो।

न्यायाधीश रानाडे ने अंग्रेज अर्थशास्त्रियों के स्वतन्त्र व्यापार के अपरिवर्तशील और निर्विवाद वैज्ञानिक सिद्धान्त को उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम चरण में स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। अर्थतन्त्र के ऐतिहासिक विश्लेषण के आधार पर उन्होनें बताया कि आर्थिक नियम समाज की ऐतिहासिक परिस्थितियों से सम्बन्धित होते हैं– प्रत्येक राष्ट्र का अपना अर्थतन्त्र होता है तथा उसे अपनी स्थिति के अनुसार आर्थिक नीति और व्यवस्था निर्धारित करनी होती है। अतः स्वतन्त्र व्यापार की सार्थकता भी परिस्थिति पर निर्भर होती है, प्रत्येक स्थिति में वह लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकती है।[21] मालवीय जी इस विश्लेषण को मूलतः स्वीकार करते थे। सन् 1907 में रूस के तत्कालीन अर्थ–सचिव काउण्ट डिविटे के निम्न वाक्य को उद्धरित करते हुए इसकी पुष्टि की– समस्त संसार के लिए प्रवेश मार्ग को उन्मुक्त कर स्वतन्त्र व्यवसाय जनता को विशेष प्रकार से सस्ता माल प्रदान करता है, किन्तु राष्ट्रों की आर्थिक उन्नति का इतिहास कठिनता से ऐसा उदाहरण उपस्थित करता है, जहाँ इस प्रकार की नीति

Estelar

ने राष्ट्र की उत्पादक शक्ति में प्रगति प्रदान की हो। इंग्लैण्ड ने स्वयं कड़े संरक्षणों द्वारा अपना व्यवसाय स्थापित किया है और जब इस उपाय से वह अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा व्यापार और व्यवसाय में सबल हो गया और उसे किसी प्रतिस्पर्धा का भ्या नहीं रह गया, तब उसने स्वतंत्र व्यवसाय नीति का अवलम्बन किया।"[22]

मालवीय जी ने तत्कालीन समाज में विधवाओं की स्थिति में सुधार करने के लिए भी भरसक प्रयत्न किया। उस समय विधवाओं को ही उनके दिवंगत पति की मृत्यु का जिम्मेदार माना जाता था, वे कलंकिनी कहलाती थी तथा वे जीवन के साधारण सुखो से ही वंचित थी। विधवाओं पर मुसीबतो का पहाड़ टूट जाता था और उनका जीवन यापन अत्यन्त दुष्कर था। अभ्युदय के एक अंक में मालवीय जी ने लिखा है, 'जिस समाज में बेटियों की इतनी अधिक संख्या है फिर भी बेटियाँ बालपन से बुढ़ापे तक अथाह दुःख में जीवन व्यतीत करती हैं तो वह समाज कभी भी सुखी और सम्पन्न नहीं हो सकता।[23] मालवीय जी चाहते थे कि विधवाओं की रक्षा और सम्मान और भरण–पोषण का प्रबन्ध किया जाये।

Estelar

सन्दर्भः–

1. अभ्युदयः 13 दिसम्बर 1907
2. पृ0 34 पुस्तक स्वतन्त्रता संग्राम– नेशनल बुक ट्रस्ट– नई दिल्ली 1972
3. अभ्युदयः 13 दिसम्बर 1907
4. लेजिस्लेटिक डिपार्टमेण्ट फाइल नं0 12/1926
5. लेजिस्लेटिक असेम्बली प्रासीडिंग पृ 368
6. शर्मा, श्रीपाल, हिन्दी पत्रकारिता, पृष्ठ 60, राष्ट्रीय नव–उद्बोधन दिल्ली, वर्ष 1979,
7. इम्पीरिल लेजिस्लेटिव कौंसिल, 1912, वोल्यूम 50, पृष्ठ 90
8. पुस्तिका अखिल भारतीय सनातन धर्म महासभा के उद्देश्य तथा प्रस्ताव और मालवीय जी के उपदेश, पृष्ठ 17–18
9. आज, 10 अप्रैल 1922
10. मर्यादा, नवम्बर 1910, पृष्ठ 83
11. सनातन धर्म, साप्ताहिक वर्ष 1, अंक–9
12. मार्डन रिव्यू, पृष्ठ 373, 1923
13. मिश्र,जयशंकर, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, महामना मालवीय, जीवन और कृतित्व, पृष्ठ 598
14. आज 10 अप्रैल 1922
15. इण्डियन क्वाटरली रजिस्टर, जौलाई दिसम्बर 1927, पृष्ठ 353
16. आचार्य, श्रीराम शर्मा, धर्मप्राण–महामना पं0 मदनमोहन मालवीय जी, पृष्ठ 14, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा–3, वर्ष 2015
17. पूर्वोक्त, पृष्ठ 15
18. सनातन धर्म, साप्ताहिक, वर्ष–1, अंक–9
19. एग्रीकल्चर कमीशन के सामने गवाही, सन् 1927
20. इंडस्ट्रियल कमीशन रिपोर्ट, सन् 1918, मालवीय जी का नोट
21. लाल, प्रों0 मुकुट बिहारी, महामना मदन मोहन मालवीय–जीवन और नेत्तृत्व, पृष्ठ 608, मालवीय अध्ययन संस्थान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
22. पूर्वोक्त पृष्ठ 609
23. अभ्युदय 20 जून 1914

Estelar

श्री मालवीय जी समाज सेवक, हिन्दुत्व के रक्षक, महान अधिवक्ता के रूप में

ब) श्री मालवीय जी- हिन्दुत्व के रक्षकः-

मालवीय जी ऐसे व्यक्ति थे जिनको हिन्दू कहलाने पर गर्व का अनुभव होता था, क्योंकि उनका लालन–पालन, शिक्षा–दीक्षा सनातन धर्म के वातावरण में हुयी थी। माता–पिता के धार्मिक विचारों का मालवीय जी पर गहरा प्रभाव पड़ा।

मालवीय जी अपने अध्ययन काल के दौरान प्रकाशित होने वाले विभिन्न समाचार पत्र जिनमें सनातन धर्म और हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों की व्याख्या होती थी, को बहुत ही रूचि के साथ पड़ते थे। बचपन के कार्यों का प्रभाव मालवीय जी पर पड़ा परिणामस्वरूप मालवीय जी हिन्दू धर्म के उदार प्रवर्तक थे।[1] चूँकि वह एक श्रेष्ठ, शिक्षित और धार्मिक परिवार में पैदा हुए, इसलिए उनके हृदय में हिन्दू संस्कार कूट–कूटकर भरे हुए थे। युवकों को अपने धर्म के प्रति उदासीन देखकर उन्हें बहुत दुःख होता था और उन्होंने निश्चय किया कि वे इसके लिए कुछ करेंगे।

Estelar

सन् 1887 में हरिद्वार में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें थियोसिफिकल सोसाइटी के प्रवर्त्तक कर्नल अल्काट भी सम्मिलित किया हुए।[2] इस अवसर पर मालवीय जी की बहुत से नेताओं से भेंटवार्ता हुई। इससे प्रेरित होकर मालवीय जी ने प्रयाग में 'हिन्दू प्रवर्द्धिनी सभा' की स्थापना की।[3] मालवीय जी ने वृन्दावन में आयोजित भारत धर्म महामण्डल के द्वितीय अधिवेशन में मुख्य वक्ता के रूप में प्रतिभाग किया[4] और हिन्दू धर्म की बहुत अच्छी व्याख्या की।

प्रयाग कुम्भ के अवसर पर सन् 1906 में मालवीय जी ने 'सनातन धर्म संग्रह' नामक ग्रन्थ पर विचार किया गया और उसके लिए निर्दिष्ट सिद्धान्तों को एकमत से स्वीकार किया गया। उसके परिणामस्वरूप वहीं पर 'सनातन धर्म महासभा' की स्थापना हो गयी।[5] 1928 में सनातन धर्म सभा विस्तरित होकर 'अखिल भारतीय सनातन धर्म महासभा' के रूप में परिवर्तित हो गई।[6] इसके सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार के लिए काशी से सनातन धर्म और लाहौर से विश्वबन्धु नामक साप्ताहिक पत्रों का प्रकाशन प्रारम्भ किया। सन् 1928 में ही मालवीय जी ने महासभा की लगभग 300 शाखाओं की स्थापना की। इस महासभा द्वारा सनातन धर्म के मूल सिद्धान्तों के प्रचार को एक मंच प्रदान किया। इन्होंने लेखों, भाषणों और कथाओं द्वारा अपने धार्मिक विचारों से हिन्दू जनता को प्रेरणा दी।

1906 के इस सम्मेलन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना का प्रस्ताव पारित किया गया और प्राचीन शिक्षा पद्धति के आधार पर हरिद्वार में ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम की स्थापना पर विचार हुआ। इस प्रकार मालवीय जी ने अपने धार्मिक विचारों को शिक्षा के प्रसार में भी प्रयोग किया और उसका ही परिणाम था कि कालान्तर में हरिद्वार में

Estelar

ऋषिकुल विद्यालय और काशी में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना हुई।

ब्रिटिश शासन स्थापित होने के साथ ही भारतीयों के लिए जैसे दुर्दिनों का आगमन हो गया। अंग्रेजो ने अपनी बर्बरता का शिकार हिन्दू व मुस्लिम भारतीयों को बनाया किन्तु अंग्रेजों की भेद नीति के कारण हिन्दुओं की स्थिति अधिक बुरी थी। मालवीय जी तत्कालीन परिस्थिति को देखते हुए समझ गए थे कि हिन्दुत्व की रक्षा के लिए हिन्दुओं को एक मंच बनाना पड़ेगा क्योंकि ईसाई मिशनरियों की सहायता से ब्रिटिश शासन हिन्दू धर्म के मूल सिद्धान्तों पर प्रहार करते तथा इसको अपने द्वारा शिक्षा व सुधार कार्य के रूप में प्रचार करते थे। अतः भारतीय हिन्दुओं को एक मंच प्रदान करने के लिए तथा हिन्दुत्व की रक्षा के लिए मालवीय जी ने सन् 1880 में प्रयाग में "हिन्दू समाज" और सन् 1884 में भारत भर में प्रसार के लिए "केन्द्रीय हिन्दू समाज" की स्थापना की।[7] इस संगठन ने स्वंय और आर्य समाज की सहायता से कई प्रशंसनीय कार्य किये। मालवीय जी ने हिन्दुओं के सर्वांगीण विकास के लिए योजना बनाई जो विश्वविद्यालय के रूप में सामने आयी।

सन् 1907 में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। मालवीय जी भी यद्यपि तत्कालीन समय के अनेक हिन्दू नेता व कार्यकर्ता की तरह मुस्लिम लीग की गतिविधि, दावों व मांगों से क्षुब्ध थे तथापि वे कांग्रेस से अलग मुस्लिम लीग जैसी प्रतिद्वन्द्वी हिन्दू राजनीतिक पार्टी बनाने के पक्ष में नहीं थे।[8] वे तो कांग्रेस को देशव्यापी राष्ट्रीय भावना के आधार पर देश का ऐसा सक्रिय राजनीतिक संगठन बनाना चाहते थे जिसकी बात स्वीकार करना सरकार के लिए आवश्यक हो जाय।[9]

Estelar

मालवीय जी हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य को देश के हित के विरूद्ध मानते थे। उनका मानना था कि जो हिन्दू या मुसलमान एक जाति को दूसरी जाति से लड़ाने का प्रयत्न करता है, वह "देश का शत्रु है—अपनी विशेष जाति का भी शत्रु है। इन दोनों जातियों में जितना ही वैर या विरोध या अनेकता रहेगी, उतना ही हम दुर्बल रहेंगे।"[10] मालवीय जी हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य से हुए साम्प्रादायिक दंगों का विरोध करते थे, 16 सितम्बर 1922 को लाहौर में भाषण देते हुए साम्प्रदायिक दंगों पर सन्ताप एवं लज्जा व्यक्त करते हुए बताया कि उनकी दृष्टि में "सारे अत्याचारी धर्महीन और नास्तिक हैं।"[11] मुल्तान में मुसलमानों द्वारा किये गये अत्याचारों पर रंज, अफसोस और लज्जा प्रकट करते हुए उन्होंने उन हिन्दुओं पर भी लानत भेजी जिन्होंने बेकसूर मुसलमानों पर हमला किया, चोटें लगायीं और मकानों को जलाया, पर इस बात पर सन्तोष प्रकट किया कि अपने धर्मस्थानों पर वार होने पर भी हिन्दुओं ने किसी मस्जिद का अपमान नहीं किया।[12] अपने इस भाषण में मालवीय जी ने हिन्दू मुस्लिम भाइयों को समझाते हुए बताया कि दुनिया में खुदा, परमात्मा अकाल पुरूष एक हैं। हिन्दू, सिक्ख, पारसी, ईसाई, मुसलमान– सब उस परमात्मा के बन्दे हैं, उस बाप के बच्चे हैं। वह तमाम हिन्दुस्तानियों का ही नहीं, तमाम दुनिया के इन्सानों का ही नहीं, बल्कि प्राणिमात्र का रक्षक है। हमसब एक पिता की औलाद हैं, एक ख़ालिक की ख़िलकत हैं, एक जगतपिता की, अकाल पुरूष की सन्तान हैं। हमारा यह रिश्ता पुराना है, मिटाये मिट नहीं सकता।[13]

मालवीय जी ने सन् 1922 के लाहौर के अपने भाषण में हिन्दू मुसलमान के रिश्ते के बारे में बोलते हुए कहा कि हिन्दुस्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों का दूसरा रिश्ता "इन्सानियत" का और तीसरा रिश्ता

Estelar

"देशवासी" होने का है।[14] इसके साथ ही उन्होंने कहा कि एक ही देश में रहने वाले हिन्दुओं और मुसलमानों का कर्तव्य है कि वे आपस में एकता कायम करें, और याद रखें कि स्वराज्य के लिए हिन्दू–मुसलमानों की एकता नितान्त आवश्यक है। इन सब के समाधान के लिए हर मुहल्ले में 'नागरिक सेना' बनाये जाने की सलाह दी। इसके सदस्यों के लिए "परमात्मा को याद रखते हुए" प्रतिज्ञा करेंगे कि वे "ईश्वर की पैदा की हुई हस्तियों से दुश्मनी नहीं रखेंगे–हिन्दुस्तान की इज्जत का ख्याल रखेंगे", तथा "एक दूसरे के धर्म की इज्जत करते हुए, सब बहनों और भाईयों की इज्जत कायम रखेंगे"।[15]

मालवीय जी चाहते थे कि हिन्दू जनता में सनातन धर्म के सजीव तत्वों और मूल सिद्धान्तों का प्रसार किया जाय, उसे अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान कराया जाय और इस तरह समाज में जीवन और शक्ति संचारित की जाये। इस हेतु उन्होंने 'सनातन धर्म सभा' स्थापित की और उसके द्वारा धर्म के मूल सिद्धान्तों के प्रचार का एक मंच प्रदान किया। उन्होंने स्वंय लेखो, भाषणों व कथाओं द्वारा अपने धार्मिक विचारों से हिन्दू जनता को प्रेरणा दी।[16]

मालवीय जी धर्मोपदेश को समाज में जीवन व शक्ति संचारित करने के लिए आवश्यक मानते थें। उनका विचार था कि हिन्दुओं को अपने ही देश में किसी जाति से राजनीतिक महत्व में कम समझा जाना हिन्दू जाति के लिए अत्यन्त कलंक और अपमान का विषय है, किन्तु यह कलंक एवं अपमान मुसलमान या किसी जाति के विरोध करने से समाप्त नहीं होगा। इसको मिटाने का एकमात्र उपाय अपने कर्त्तव्यों का पालन करना है।[17] धर्मोपदेश के द्वारा हिन्दू जनता में सनातन धर्म के सजीव तत्वों और मूल सिद्धान्तों का प्रसार किया जा सकता है इससे उनमें उचित गुण

Estelar

उत्पन्न किये जायें, उन्हें अपने कर्तव्यों का ज्ञान कराया जाय। मालवीय जी ने अभ्युदय के एक अंक में लिखा है कि जाति की उन्नति अथवा अवनति इतने धीरे–धीरे होती है कि वह होती हुई दिखाई नहीं देती। किसी जाति की उन्नति तब तक नहीं हो सकती है, जब तक कि वह अपनी वर्तमान दशा से असन्तुष्ट होकर उसे सुधारने का यत्न न करें।[18] वर्तमान अवस्था से असन्तोष व उन्नति की इच्छा, ये दो उन्नति के मूल मन्त्र हैं।

मालवीय जी ने अपने सम्पूर्ण धार्मिक विचारों को एक छोटी सी पुस्तिका 'हिंदू धर्मोपदेश' में व्यक्त किया है।[19] इस पुस्तिका में उन्होंने स्वंय के सनातन धर्म का अनुयायी होने का विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि घर घर में बसने वाले भगवान विष्णु का, सर्वव्यापी ईश्वर का सुमिरन करना चाहिए। जिनके समान कोई दूसरा नहीं है, जो अद्वितीय है, जो दुखों और पापों को हरने वाले शिव स्वरूप हैं। जो सब पवित्र वस्तुओं से अधिक पवित्र, सब मंगल कार्यों से मंगल स्वरूप हैं। जो सब देवताओं के देवता है और जो समस्त संसार के आदि, सनातन, आज, अविनाशी पिता हैं।[20] मालवीय जी ने हिंदू धर्म के अनुयायियों को इस धर्म में विश्वास रखने और उसी के अनुसार आचरण करने की शिक्षा दी। उन्होंने लिखा है 'सनातन धर्मी, आर्य समाजी, सिख, जैन और बौद्ध आदि सब हिंदुओं को चाहिए कि अपने–अपने विशेष धर्म का पालन करते हुए एक दूसरे के साथ प्रेम व आदर से रहें। इस धर्म के सर्वस्व को सुनकर इसके अनुसार आचरण करों। मनुष्य को चाहिए कि उस काम को वह दूसरे के प्रति न करे क्योंकि वह जानता है कि यदि उसके साथ कोई ऐसी बात करता है, जो उसे प्रिय नहीं है तो उसे कैसी पीड़ा पहुचती है। उचित तो यही है कि हर आदमी चाहे कि सब लोग सुखी रहें, सबका भला हो, कोई दुख न

Estelar

पायें। धर्म के अनुसार चलने वाले को कभी इसका त्याग नहीं करना चाहिए।

तत्कालीन समय में हिन्दुओं की एक समस्या गो–रक्षा की थी। हिन्दू धर्म में गाय का पालन पुण्य का विषय था, गाय की संख्या के आधार पर किसी की समृद्धि का अनुमान किया जाता था, सबसे बड़ा दान गौ–दान होता था। प्राचीन काल में मौर्य शासकों के समय से ही गौ–पालन उचित ढ़ग से न करने वाला ग्वाला दण्ड का भागी होता था। मुगल शासक बाबर द्वारा अपने पुत्र हुमायूँ को भी गो–रक्षा में तत्पर रहने का मूल मन्त्र दिया था जिससे कि हिन्दुओं का दिल जीता जा सका। गाय के द्वारा उत्पादित दूध अमृत तुल्य माना जाता था और उसका उपयोग शरीर के उचित पोषण व रोगों के उपचार में किया जाता था। इसके अतिरिक्त गो–मूत्र से दवाईयॉ बनती थी और गोबर का प्रयोग खाद व ईंधन के रूप में किया जाता था। मालवीय जी भी गो–पालक थे और स्वंय गाय की देखभाल करते थे। मालवीय जी ने अपने भाषण के द्वारा गाय के उपरोक्त धार्मिक व आर्थिक लाभों से जनता को अवगत कराया।

यह एक अनोखा संयोग है कि सन् 1877 में मालवीय जी ने सोलह वर्ष की उम्र में गो–रक्षा पर अपना प्रथम भाषण दिया था और उनका अन्तिम भाषण भी सन् 1946 में गो–रक्षा पर ही था।[21] गो–रक्षा के प्रति उनके ह्रदय में अपार स्नेह व लगन थी।

मालवीय जी की हिन्दू धर्म के प्रति निष्ठा के अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। हिन्दू धर्म की रक्षा और प्रसार के लिए उन्होंने सरकार से भी धार्मिक सत्याग्रह किया और विजय प्राप्त की। सन् 1924 में प्रयाग महाकुम्भ के अवसर पर गंगा की धारा बदलने के कारण तत्कालीन मेला प्रबन्धकों द्वारा स्नान पर रोक लगा दी गयी। जब इस विषय पर अधिकारियों और

कर्मचारियों में तनाव बढ़ गया तो मालवीय जी ने शासन से सम्पर्क कर अपील की किन्तु कोई सकारात्मक परिणाम नहीं आया। अतः मालवीय जी स्वंय सत्याग्रहियों के साथ गंगा तट पर पहुॅच गये तथा जवाहर लाल नेहरू के सहयोग से गंगा स्नान को रोकने के लिए बनाया गया लकड़ी का फाटक रूपी व्यवधान समाप्त कर दिया।

इसी प्रकार 1928 में हरिद्वार कुम्भ के अवसर पर मेला व्यवस्थापकों ने तट के सामने एक द्वीप पर पुल बना दिया जिससे यात्रियों को असुविधा होने लगी। स्नानार्थियों में इस व्यवस्था के प्रति क्षोभ था। तब मालवीय जी ने मेला अधिकारियों से इस पुल को हटाने की अपील की जिसके बाद मालवीय जी ने सत्याग्रह की धमकी दी और तत्कालीन राज्यपाल महोदय को वस्तुस्थिति से अवगत कराया। अन्ततः तत्कालीन राज्यपाल महोदय ने पुल हटाने का आदेश जारी किया।

जब भी हिन्दू समाज पर कोई संकट आता तो तब सबकी दृष्टि मालवीय जी पर जम जाती। लोगों को विश्वास था कि केवल मालवीय जी उस संकट के समाधान का कोई उपाय कर सकते हैं। सन् 1946 में नोआखाली में हिन्दू समाज पर अमानवीय अत्याचारों से मालवीय जी व्यथित हो उठे।[22] उन्होंने हिन्दुओं को संगठित होने के लिए प्रेरित किया।

'हिन्दू धर्मोपदेश' नामक लघु पुस्तक में मालवीय जी के धार्मिक वृत्तियों का सटीक चित्रण है। इस पुस्तक में मालवीय जी ने हिन्दू धर्म के विकास के लिए अपने अनुभवों की रेखा में कहते हैं– "ईश्वर में आस्था जाग्रत करने के लिए, बुराई को दण्डित करने के लिए, धर्म की स्थापना हेतु गांव–गांव में धार्मिक सभा का आयोजन करना चाहिए। पर्वों को सामूहिक हर्षोल्लास से मनाया जाना चाहिए। निराश्रितों की रक्षा करने

Estelar

के लिए तत्पर रहना चाहिए। धर्मस्थलों की रक्षा एवं सफाई में समर्पित होना चाहिए। दान की भावना जाग्रत हो। सभी जीवों के प्रति दया भावना को प्रोत्साहन मिले। अत्याचारियों को दण्डित करने में किंचित मात्र भी दया न रहे। मानव की निर्भयता, सच्चाई और ब्रह्मचर्य को पालन करना चाहिए। कर्म के अनुसार फल मिलता है, यह स्मरण रहना चाहिए। परमपिता परमेश्वर का सुमिरन करना ही मानव जीवन का उद्देश्य है। प्राणीमात्र में सद्भावना जाग्रत करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। दूसरों के साथ वही व्यवहार करो, जिसकी अपेक्षा दूसरों से चाहते हो, न किसी से डरना और न किसी को डराना। यही जीवन का उद्देश्य रहना चाहिए।"[23]

मालवीय जी की इस व्याख्या से उनकी महानता ज्ञात होती है। वे मानते थे कि हिन्दू धर्म सभी धर्मों में ज्यादा प्रभावशाली व सुसज्जित है जिसमें चार पुरूषार्थ व चार आश्रम हैं। इसके साथ ही उनके हृदय में सर्व धर्म सम्भाव की भावना थी। वह विश्वबन्धुत्व व स्वदेश प्रेम की भावना से ओत–प्रेत थे।

Estelar

सन्दर्भः–

1. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 36, सीमा पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–32, वर्ष 2006
2. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रांतिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 74, डायमण्ड बुक्स, दिल्ली–32, वर्ष 2008
3. पूर्वोक्त
4. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 37, सीमा पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–32, वर्ष 2006
5. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रांतिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 76, डायमण्ड बुक्स, दिल्ली–32, वर्ष 2008
6. पूर्वोक्त, पृष्ठ 77
7. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 33, सीमा पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–32, वर्ष 2006
8. लाल, प्रों0 मुकुट बिहारी, महामना मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 130, मालवीय अध्ययन संस्थान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
9. पूर्वोक्त
10. अभ्युदय, फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी, सम्वत् 1963
11. चतुर्वेदी, सीताराम, महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय खण्ड 2, पृष्ठ 73, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, वर्ष 1972
12. पूर्वोक्त पृष्ठ 75
13. पूर्वोक्त पृष्ठ 78
14. पूर्वोक्त पृष्ठ 79
15. पूर्वोक्त पृष्ठ 84
16. पाण्डेय, डॉ0 विश्वनाथ, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना पंडित मदन मोहन मालवीय,पृष्ठ 15, प्रकाशन कक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी, वर्ष 2006
17. अभ्युदय, 26 मार्च 1909
18. अभ्युदय, 4 जून 1907
19. राजस्वी, एम0 आई0, पं0 मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 82, मनोज पब्लिकेशन्स दिल्ली–84, वर्ष 2013
20. पूर्वोक्त, पृष्ठ 82–83
21. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 36, सीमा पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–32, वर्ष 2006
22. पूर्वोक्त, पृष्ठ 58

Estelar

23. पूर्वोक्त, पृष्ठ 41

Estelar

श्री मालवीय जी समाज सेवक, हिन्दुत्व के रक्षक, अधिवक्ता के रूप में

स) महान अधिवक्ता के रूप में:-

मालवीय जी राजा रामपाल सिंह के आग्रह पर 'हिन्दुस्तान' समाचार पत्र के संपादक का कार्य कर रहे थे। संपादक का कार्य मालवीय जी ने एक शर्त पर स्वीकार किया था कि ''जब राजा साहब शराब पीए हुए हों तो उस स्थिति में राजा मालवीय जी को न तो अपने कक्ष में बुलाएंगे और न ही किसी प्रकार का वार्तालाप करेंगे।'' किन्तु एक दिन राजा रामपाल अपने इस वचन का पालन न कर पाए। अतः पंडित मदन मोहन ने स्वयं को 'हिन्दुस्तान' का संपादन करने में स्वयं को असमर्थ पाया। राजा रामपाल सिंह ने महामना से अनुरोध किया कि वे इस बारे में जल्दीबाजी को कोई निर्णय न करें व गम्भीरतापूर्वक विचार कर लें। सिद्धान्तवादी मदन मोहन ने अपना निर्णय नहीं बदला।[1]

कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में मालवीय जी के चमत्कारी भाषणों ने सभी को मुग्ध कर दिया। मालवीय जी के मित्रों द्वारा आग्रह किया गया कि आप राजनैतिक कार्यों में अधिक समय दें। तत्कालीन समय

Estelar

में राजनीति की अच्छी समझ होने के लिए कानून का ज्ञान आवश्यक था। मालवीयजी के बचपन के सखा सर सुन्दरलाल ने मालवीयजी को कहा, ''देखो मित्र, यदि राजनीति में सबसे आगे बढ़ जाना चाहते हो, तो वकालत पढ़ो। कानून की बारीकी जाने बिना राजनीति में आगे नहीं बढ़ा जा सकता। शासकों की भाषा समझने के लिए कानून का अध्ययन करना आवश्यक है।'' इस युक्ति ने मालवीय जी को वकालत पढ़ने के लिए उद्यत किया।[2] इसके अतिरिक्त कालाकांकर के राजा रामपाल के 'हिन्दुस्तान' का संपादन छोड़ने के पश्चात् राजाजी ने मालवीय जी को वकालत पढ़ने के लिए सहमत कर लिया।[3] राजा रामपाल ने मालवीय जी के लाख इंकार करने पर भी उनकी पढ़ाई का खर्च सौ रूपये प्रतिमाह के हिसाब से दिया[4], ये खर्च वे पंडित जी को आजीवन भेजते रहे।[5] मालवीय जी में कठिन विषय को समझने, विश्लेषण करने एवं आत्मसात करने की अद्भुत क्षमता थी। उन्होंने वकालत का अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया। इस समय वे 'इण्डियन यूनियन' में भी सह सम्पादक के रूप में कार्य कर रहे थे। उन्होंने संवैधानिक विधि पर विस्तृत सूत्र तैयार किये।[6] यह सर्वत्र चर्चा का विषय बन गयी। उस आख्या में जो सूत्र तैयार किये गये थे, वे इतने विस्तृत और प्रामाणिक थे कि लोगों को विश्वास हो गया था कि वह अवश्य ही एक महान अधिवक्ता बनेंगे।[7] मालवीय जी समाज सुधार और धर्म प्रचार के कार्यों में रूचि रखने के कारण वकालत की पढ़ाई को पूरा समय नहीं दे पाते थे। परन्तु कुशाग्र बुद्धि के होने के कारण समयाभाव में भी उन्होंने कानून के अध्ययन में महारत हासिल कर ली, परन्तु विधाता ने उनके साथ क्रूर मजाक किया और उनके छोटे भाई मनोहरलाल की आकस्मिक मृत्यु हो गई। मालवीय जी को इससे बढ़ा आघात लगा। अपने शुभचिन्तको द्वारा

Estelar

समझाए जाने पर किसी तरह उन्होंने परीक्षा दी एवं परिणाम सकारात्मक रहा।

सन् 1891 में वकालत पास करके वे पंडित बेनीराम कान्यकुब्ज जिला अदालत जाने लगे।[8] एक सफल अधिवक्ता होने के सभी गुण मालवीय जी में मौजूद थे। वे कुशाग्र बुद्धि, अच्छे वक्ता, नियमों के जानकार एवं परिश्रमी थे। मुकदमे की पक्की तैयारी, प्रभावशाली वाणी और मुकदमे को पेश करने के प्रभावशाली ढ़ंग के कारण जज को उनकी बात माननी ही पड़ती थी। उनके तर्कों, तथ्यों एवं विश्लेषण के सामने विपक्ष के वकील की कभी न चल सकी। उनके तर्कों एवं तथ्यों का खण्डन कर पाना असंभव होता था। शीघ्र ही उनकी वकालत की ख्याति चारों तरफ फैल गई। इससे मालवीय जी के परिवार की आर्थिक स्थिति में कुछ सुधार हुआ। उनकी विशेषता थी कि धन अर्जन के लिए वे कभी झूठे मुकदमों की पैरवी नहीं करते थे।[9] गरीबों के मुकदमों की पैरवी बिना किसी आर्थिक लाभ के करते थे।[10] वे अपने कार्य के प्रति इतने निष्ठावान थे कि अपने मुवक्किलों को कार्य देखने–सुनने में संध्या और भोजन तक भूल जाते थे और अपने ये कार्य भी वे मुवक्किलों को संतुष्ट करने के बाद की करते थे।[11]

शेरकोट की रानी का मुकदमा जीतने पर मालवीय जी का यश चतुर्दिक फैल गया। इससे प्राप्त धन से मालवीय जी ने अपना पिछला सारा कर्ज चुका दिया एवं भारती भवन में अपने पुराने मकान का जीर्णोद्धार भी करा सके।[12]

मालवीय जी के वकालत के समय के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक देवनागरी लिपि के प्रयोग को सरकार द्वारा स्वीकृति दिलवाना है।

Estelar

इससे पहले अदालतों में फारसी लिपि का प्रयोग किया जाता था। मालवीय जी के प्रयास से 2 मार्च 1898 को अयोध्या नरेश महाराजा प्रताप नारायण सिंह, माँडा नरेश राजा रामप्रसाद सिंह, पं0 सुन्दरलाल तथा कुछ अन्य लोग एंटोनी मैक्डोनल से मिले जो उस समय प्रान्त के लेफ्टिनेन्ट गर्वनर थे।[13] इन लोगों ने श्री मैक्डोनल को प्रार्थना पत्र दिये। मालवीय जी के अथक प्रयास के फलस्वरूप अदालतों में फारसी के साथ–2 देवनागरी लिपि के प्रयोग का आदेश 14 अप्रैल 1900 को जारी कर दिया गया।[14]

सर तेज बहादुर सप्रू, जो कालान्तर में प्रसिद्ध वकील हुए और 'सर' की उपाधि से विभूषित किये गये, मालवीय जी से उम्र में छोटे थे। वे प्रारम्भ में कानपुर में वकालत करते थे। मालवीय जी ने उनकी प्रतिभा को पहचाना तथा उन्हें इलाहाबाद ले आए। इस प्रकार सप्रू जी को वकील के रूप में प्रसिद्धि दिलाई।

तेज बहादुर सप्रू ने मालवीय जी की वकालत के विषय में एक स्थान पर लिखा है– ''वकालत आरम्भ करने के थोड़े ही वर्षों में दीवानी पक्ष में मालवीय जी की वकालत बहुत चमक उठी थी। तब वे इलाहाबाद के चोटी के चार वकीलों में गिने जाने लगे थे। पण्डित सुन्दरलाल, पण्डित मोतीलाल नेहरू और श्री चौधरी इनके अलावा तीन प्रसिद्ध अधिवक्ता थे।[15] सर मिर्जा इस्माइल ने कहा है–''मैंने एक महान वकील को कहते हुए सुना है कि यदि मदन मोहन मालवीय ने चाहा होता, तो वे कानूनी पेशे के लिए एक आभूषण बन गये होते।''[16] मालवीय जी का चरित्र इतना निष्कलंक था कि प्रसिद्ध न्यायाधीश जैसे हेनरी रिचर्ड, जौन स्टेनली आदि इनकी योग्यता के साथ–2 इनके चरित्र की भी तारीफ करते थे।

Estelar

वास्तव में मालवीय जी बहुत महान व्यक्ति थे। सफलता के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने वकालत छोड़ने का मन सन् 1910 में ही बना लिया था। उनके पिता ने मालवीय जी को परामर्श दिया कि यदि तुम धन के लालच में लगे रहोगे तो देश सेवा को पूरा समय नहीं दे पाओगे। बड़ी सफलता प्राप्त करने के लिए छोटे मोह का त्याग करना होगा। ये विचार मालवीय जी के हृदय में जागृत हुआ। उनकी मनोदशा देख पुत्र रमाकान्त ने कहा–'घर हम संभाल लेंगे, आप देश की सेवा कीजिए।'[17]

सन् 1911 में मालवीय जी वकालत का कार्य पूर्णतः छोड़ दिया।[18] इस पर गोपाल कृष्ण गोखले, जिन्हें जनता त्यागी कहती थी, ने मालवीय जी को महात्यागी की उपाधि दी।[19] उन्होंने मालवीय जी के बारे में कहा कि वे एक निर्धन परिवार में जन्मे। अपनी योग्यता के बल पर वकील बन गये। वैभव का स्वाद चखा, बहुत अधिक धन अर्जन किया परन्तु राष्ट्र सेवा के लिए सबकुछ न्यौछावर करने में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं की। सहर्ष निर्धनता स्वीकार कर ली। वास्तव में त्याग इसे ही कहते हैं।[20]

वकालत छोड़ने के पश्चात् मालवीय जी राष्ट्र हित, समाज सेवा व विश्वविद्यालय की स्थापना के कार्य में मनचित्त से लग गये। परन्तु 5 फरवरी 1922 को देश में एक महत्वपूर्ण घटना घटित हुई, जिसने मालवीय जी ने वकील का चोगा पहनने पर विवश कर दिया। गाँधी जी द्वारा शुरू किये गये असहयोग आन्दोलन की परिणिति चौरी–चौरा काण्ड के रूप में हुई। कुछ देशभक्तों ने सरकार के कारनामों से बौखलाकर गोरखपुर जिले के चौरा–चौरी पुलिस थाने में आग लगा दी। इस अग्निकाण्ड में 21 पुलिस सिपाही जलकर मृत्यु को प्राप्त हो गये। इसके पश्चात् उस क्षेत्र में 225 लोगों को बन्दी बनाकर अभियोग चलाया गया।[21]

Estelar

गोरखपुर के सत्र न्यायाधीश ने 225 में से 170 लोगों को फाँसी की सजा का दण्ड दे दिया।[22] यह निश्चित किया गया कि सत्र न्यायाधीश के निर्णय के विरूद्ध इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अपील करेंगे। प्रख्यात अधिवक्ता मोतीलाल नेहरू से आग्रह किया गया कि वे इस मुकदमे की पैरवी करें। पण्डित नेहरू ने निर्णय की प्रति एवं अन्य कागजात देखने के बाद कहा कि यदि इस मुकदमे में कोई वकील दण्डितों के पक्ष में सही पैरवी कर सकता है तो वह मालवीय ही है, अन्य कोई नहीं।[23]

मालवीय जी ने राष्ट्र पुकार में लगभग 10 साल बाद पुनः एक वकील के रूप में अदालत जाने के आग्रह को स्वीकार कर लिया। राष्ट्रहित के नाते मालवीय जी ने इस मुकदमे की पैरवी निःशुल्क की।

मुकदमे की तारीख के पहले दिन सांयकाल मालवीयजी प्रयाग पहुंचे। मुकदमे का अध्ययन करने का समय महामना को नहीं मिला। अपनी कार में ही बैठे, उन्होंने मुकदमे पर एक नजर डाली। एक बार फिर हाईकोर्ट में मालवीयजी की तीव्र बुद्धि, प्रतिभा एवं वाग्मिता की परीक्षा हुई। मालवीय जी के तर्कों को सुनने के लिए कोर्ट में स्वाभाविक रूप से बहुत भीड़ थी। मालवीयजी ने अभियुक्तों की ओर से तीन घंटे तक डट कर बहस की। प्रधान न्यायाधीश सर ग्रीमवुड मीयर्स, जो इस वाद के दो न्यायाधीशों में से एक थे, ने मालवीय जी की बहस के दौरान तीन बार अपने कुर्सी से उठकर महामना का अभिवादन किया था।[24] अपील की पैरवी को समाप्त करते हुए महामना ने न्यायमूर्ति को लक्ष्य करके कहा, ''आप न्याय करें पर दया और मानवता का त्याग न करें। न्याय प्रतिहिंसात्मक और प्रतिशोधात्मक नहीं होना चाहिए। न्याय ऐसा हो, जो न्याय की प्रतिष्ठा और गौरव बढ़ाने वाला हो।''[25] परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय ने 170 में से

Estelar

150 के मृत्यु दण्ड को रद्द कर दिया। चारों ओर मालवीय जी की जय–जयकार हो रही थी।

निर्णय के पश्चात् न्यायाधीश ने मालवीय जी को सम्बोधित करते हुए कहा– ''जिस विस्मयकारक योग्यता से आपने इस मुकदमे में बहस की है, उसके लिए ये सभी अभियुक्त एवं इनके परिवार सदैव आपके कृतज्ञ रहेंगे। मैं अपनी ओर से एवं अपने सहयोगी न्यायमूर्ति पिगट की ओर से भी इस सुन्दर रीति से मुकदमे पर की गयी बहस की आपको बधाई देता हूँ। आपके अतिरिक्त कोई भी अन्य व्यक्ति इस मुकदमे को इतने अच्छे ढ़ंग से प्रस्तुत नहीं कर सकता था।[26]

वकालत की ऐसी कीर्ति से ज्यादा कोई व्यक्ति क्या चाह सकता है। वकालत के व्यवसाय में शायद ही ऐसी कीर्ति किसी अन्य व्यक्ति को प्राप्त हुई होगी। जब न्यायाधीश ने स्वयं ही केस के दौरान किसी अधिवक्ता की इस प्रकार की इस प्रकार की प्रशंसा की हो। इस प्रकार वह एक महान एवं सफल अधिवक्ता थे जिन्हें इतना सम्मान व कीर्ति प्राप्त हुई हो।

Estelar

सन्दर्भ:-

1. राजस्वी, एम0आई0, पं. मदन मोहन मालवीय, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, छठां संस्करण 2013
2. विद्यालंकार, अवनीन्द्र कुमार, महामना मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 11, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, द्वितीय संस्करण अक्टूबर 1989
3. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 43, सीमा पब्लिशिंग हाऊस, वर्ष 2006
4. यादव, महेन्द्र, चिरस्मरणीय महान व्यक्तित्व भाग–9, पृष्ठ 50, सी0बी0टी0 प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2010
5. विद्यालंकार, अवनीन्द्र कुमार, महामना मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 10, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, द्वितीय संस्करण अक्टूबर 1989
6. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 43, सीमा पब्लिशिंग हाऊस, वर्ष 2006
7. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रान्तिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 39, डायमंड पॉकेट बुक्स नई दिल्ली, वर्ष 2008
8. यादव, महेन्द्र, चिरस्मरणीय महान व्यक्तित्व भाग–9, पृष्ठ 50, सी0बी0टी0 प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2010
9. मित्तल, डॉ. महेन्द्र, आधुनिक भारत के महानतम भारतीय, पृष्ठ 18, ग्लोबल हॉरमनी पब्लिशर्स दिल्ली, वर्ष 2011
10. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रान्तिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 45, डायमंड पॉकेट बुक्स नई दिल्ली, वर्ष 2008
11. राजस्वी, एम0आई0, पं. मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 42, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, छठां संस्करण 2013
12. यादव, महेन्द्र, चिरस्मरणीय महान व्यक्तित्व भाग–9, पृष्ठ 50, सी0बी0टी0 प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2010
13. पूर्वोक्त, पृष्ठ 51
14. पूर्वोक्त, पृष्ठ 50
15. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 45, सीमा पब्लिशिंग हाऊस, वर्ष 2006
16. http://googleweblight.com/
17. यादव, महेन्द्र, चिरस्मरणीय महान व्यक्तित्व भाग–9, पृष्ठ 50, सी0बी0टी0 प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2010
18. शर्मा, विश्वमित्र, बीसवीं सदी के 100 प्रसिद्ध भारतीय, पृष्ठ 27, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, वर्ष 2007
19. शर्मा, चेतन, मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 45, सीमा पब्लिशिंग हाऊस, वर्ष 2006

Estelar

20. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रान्तिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 42, डायमंड पॉकेट बुक्स नई दिल्ली, वर्ष 2008
21. पूर्वोक्त, पृष्ठ 43
22. पूर्वोक्त, पृष्ठ 46
23. पूर्वोक्त, पृष्ठ 42
24. www.allahabadhighcourt.in
25. विद्यालंकार, अवनीन्द्र कुमार, महामना मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 13, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, द्वितीय संस्करण अक्टूबर 1989
26. कौशिक, अशोक, भारत के महान अमर क्रान्तिकारी मदन मोहन मालवीय, पृष्ठ 43, डायमंड पॉकेट बुक्स नई दिल्ली, वर्ष 2008

Estelar